30 मार्च, 2010 को 1700 बजे मुम्बई में श्रीमती नत्थीबाई दामोदर ठकरसे महिला विश्वविधालय के 59वें वार्षिक दीक्षांत समारोह में भारत के माननीय उपराष्ट्रपति श्री मो. हामिद अंसारी का दीक्षांत अभिभाषण

राष्ट्रीय संवाद में नारी की स्थिति -भावी योजना

मुझे आज के समारोह में भाग लेते हुए हर्ष हो रहा है। दीक्षांत समारोहों का जीवन में वही महत्व होता है जो कि सामाजिक जीवन में त्योहारों का होता है। ये समारोह परिवर्तन की रवायतों, ऋतुओं में परिवर्तन, उपलब्धियों के समारोह और विश्वविद्यालय के मुख्य द्वारा के बाहर की निर्मम दुनिया का सामना करने की मंगलकामना के द्योतक हैं।

दीक्षांत समारोह जीवन के अनुभवों से सीख लेने के अवसर भी होते हैं, जैसा कि टैनिसन ने कहा था:

येट ऑल एक्सपीरियंस इज एन आर्ट वेयरथ्रू

ग्लीम्स दैट अनट्रैवलड वर्ल्ड हूस मार्जिन फेड्स

फारेवर एंड फारेवर वैन आई मूव

(यद्यपि सम्पूर्ण अनुभव एक कला है जिसके द्वारा उस अनदेखी दुनिया के दर्शन होते हैं जिसका क्षितिज मेरे कदमों के साथ-साथ धूमिल होता जाता है।)

यह विश्वविद्यालय लगभग एक शतक से भी अधिक समय से भारत में विधवाओं और महिलाओं की अवसादकारी सामाजिक आर्थिक परिस्थिति को सुधारने के डा. धोंडे केशव करवे की दूरदृष्टि एवं प्रयास का गवाह है। उनका यह कथन कि भारत की महिलाओं को सशात्त्कीकरण तथा उन्हें आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी बनाने की प्रक्रिया में शिक्षा एक अहम कड़ी है, आज भी सार्थक है। महर्षि करवे जी की दूरदृष्टि को सर विठ्ठलदास ठकरसे के योगदान और समर्थन में पूरा किया।

'विश्वविद्यालय का उद्देश्य-संस्कृता स्त्री पराशक्ति'-एक प्रबुद्ध नारी असीम शक्ति की स्त्रोत है-की वैधता सार्वभौमिक है। भारत तथा दक्षिण एशिया में प्रथम महिला विश्वविद्यालय के रूप में और अनुपम राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्र से संपन्न एस एन डी टी विश्वविद्यालय उच्चतर शिक्षा में महिलाओं की दक्षता का सूचक है।

II

मित्रो,

मैं आज समसामयिक प्रासंगिकता वाले एक मुद्दे पर अपने कुछ विचार आपके समक्ष रखना चाहता हूँ। मैं हमारे राष्ट्रीय संवाद में नारी की स्थिति का उल्लेख करना चाहता हूँ। इसकी क्या समसामयिक महत्ता है? यहां से हम किस दिशा में जायेंगे?

संवाद का संदेश पुरातन है तथा समाज विज्ञानियों ने इसके विकास, सीमाओं और सूक्ष्म भेदों का पता लगाया है। आज हमारे प्रयोजन के लिए, और यदि हम स्वतंत्रता काल को संदर्भ बिंदु के रूप में लें तो इस बात में कोई संदेह नहीं कि लैंगिक समानता का सिद्धांत इस गणराज्य की मूलभूत विशेषता है और संविधान में अंतर्निहित है। उद्देशिका तथा मौलिक अधिकारों, मौलिक कर्त्तव्यों और नीति निदेशक सिद्धांतों संबंधी धाराएं सुस्पष्ट है। संविधान महिलाओं को न केवल समानता का अधिकार प्रदान करता है और भेदभाव को प्रतिषिद्ध करता है अपितु यह भी मानता है कि नारियां उपेक्षित हैं और राज्य को उनके पक्ष में सकारात्मक कार्यवाही के उपाय अपनाने की शक्ति प्रदान करता है।

इन संवैधानिक उपबंधों का उच्चतम न्यायालय द्वारा पुनः समर्थन किया गया है जिसने ठहराया है कि संविधान में समानता का खंड केवल कानून के समक्ष औपचारिक समानता की बात नहीं करता बल्कि इसमें वास्तविक और मौलिक समानता की संकल्पना शामिल है जोकि सामाजिक और आर्थिक न्याय का एक आवश्यक घटक है।

कानूनी समानता, संभवतः इस मामले का एक सरल पहलू है जबकि सामाजिक वास्तविकता इससे भिन्न है। हमारे जैसे प्राचीन एवं विविधता वाले समाज में परंपरा, धारणा एवं प्रथा की रचना करती है और अपनी कहानी बताती हैं और इन दोनों के बीच के गहरे अंतर को प्रकट करती

हैं। सामाजिक वास्तविकता और इसके लिए जिम्मेदार कारणों को कम महत्व देने की प्रवृत्ति भी समान रूप से परेशान करती है।

यह आवश्यक है कि समस्या के बुनियादी, अनकहे स्त्रोतों में जाना जाए। यह तर्क दिया गया है कि हमारी पितृसत्तात्मक संस्कृति और समाज में महिलाओं के दमन का मूल कारण महिलाओं की पहचान उनकी देह से करना है। "अधिकांशत: महिलाओं को भावनात्मक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक और भौतिक अधिकारों से वंचित रखा जाता है। यह तथ्य कि नारी देह को निर्धारित सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिकाओं के अनुरूप चलने एवं ढलने के लिए निरंतर दबाव में रहना होता है, उन क्षेत्रों के बारे में सवाल करता है जिनकी सुरक्षा किए जाने की आवश्यकता है और जिन अधिकारों का दावा किया जाता है ताकि महिलाओं की दैहिक अखंडता का सम्मान हो सके।"

कुछ साल पहले प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने जन्म-दर और जन्मोतर, दो विस्तृत श्रेणियों में सात प्रकार की महिला-पुरूष असमानता की पहचान की थी और इस बात को मान्यता दिए जाने की आवश्यकता पर जोर दिया था कि "महिला-पुरूष असमानता के एक नहीं अनेक दु:ख हैं जिसका महिलाओं और पुरूषों, तथा लड़कियों एवं लड़कों पर अलग-अलग असर पड़ता है; अत: जैसा कि उन्होंने कहा आवश्यकता इस बात की है कि "महिला-पुरूष असमानता का बहुलवादी दृष्टिकोण रखा जाए, जिसके एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र और एक काल से दूसरे काल में भी अलग-अलग पहलू हो सकते हैं।"

इस अंतर को मापा जा सकता है। जनसंख्या के घटते हुए स्त्री-पुरूष अनुपात संबंधी आंकडे सर्वविदित हैं। भेदभाव और असमता तो महिला नागरिक के पैदा होने से पूर्व ही शुरू हो जाता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी और बढ़ती हुई आमदनी के साथ प्राचीन पूर्वाग्रह ग्रस्तता के विवाह से ग्रामीण और शहरी भारत की विशाल पट्टियां गुमशुदा बालिकाओं की महा गाथाओं से अटी हुई हैं।

एक चौथाई गर्भवती महिलाओं को प्रसव-पूर्व देखभाल नहीं मिलती और कुशल स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा आधे से भी कम प्रसव कराए जाते हैं। लड़कों की तुलना में माताओं और लड़कियों के अल्प-पोषित होने की घटनाएं बहुत अधिक हैं। लड़कों की तुलना में प्राथमिक स्कूल में लड़कियों के दाखिला लेने की दर कम है और अंतत: यह 15 से 24 वर्ष की आयु वर्ग में महिला साक्षरता दर में परिलक्षित होता है। इसी तरह, महिलाओं के आर्थिक क्रियाकलाप कम हैं और इसीलिए व्यावसायिक और तकनीकी कार्य में महिलाओं की भागीदारी कम है।

सत्ता की संरचनाओं में प्रतिनिधित्व की दृष्टि से, और जबकि आधारभूत स्तर पर स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन आया है, मध्य और उच्चतर स्तरों पर राजनीतिक निर्णयन में महिलाओं की भागीदारी अत्यधिक निम्न है। लोक सभा में महिलाओं द्वारा धारित स्थान 11 प्रतिशत से भी कम है। राज्य

विधान सभाओं के मामले में, स्थिति और भी बदतर है। जहां 8 प्रतिशत से भी कम विधि-निर्माता महिलाएं हैं।

राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद द्वारा हाल में किए गए पारिवारिक आय और व्यय संबंधी एक राष्ट्रीय सर्वेक्षण आर्थिक क्षेत्र में मौजूद चौंका देने वाली असमानताएं उजागर करता है। यह दर्शाता है कि (क) देश में स्नातक और स्नातकोत्तर उत्तीर्ण व्यक्तियों का केवल एक-तिहाई हिस्सा महिलाएं हैं। (ख) स्नातक महिलाओं में से 35% गृहणियां हैं, (ग) वेतन वाली 88% नौकरियां पुरूषों के पास हैं, (घ) अधिकतर व्यवसायों में, गैर-स्नातक महिलाओं ने पुरूषों द्वारा अर्जित की जाने वाली धनराशि का आधा से भी कम अर्जित किया, और (ड.) वेतन वाली नौकरियां करने वाले स्नातक व्यक्तियों में, पुरूषों ने महिलाओं से एक तिहाई अधिक अर्जन किया।

महिला नागरिकों को अपने पति का उल्लेख किए बिना अपने बच्चों को अपनी नागरिकता हस्तांतरित करने की अनुमति देने में हमें आजादी के बाद चार दशक से अधिक समय लग गया और घरेलू हिंसा के विरूद्ध स्पष्ट कानूनी सुरक्षा प्रदान करने में पांच दशक से अधिक समय लग गया। अपनी जाति, जनजाति या अधिवास स्थिति को सहगामी लाभों के साथ स्पष्ट रूप से अपने बच्चों को हस्तांतरित करने की एक महिला नागरिक की क्षमता अभी तक अस्पष्ट है और यह मामला-दर-मामला निर्धारण पर निर्भर करती है।

इस निष्कर्ष से इनकार नहीं किया जा सकता है कि जहां सभी नागरिक समान हैं, महिला नागरिकों की समानता स्पष्ट रूप से पुरूषों की तुलना में कम है। पितृसत्तात्मकता की आधारभूत संरचना अभी भी व्याप्त है जो शीघ्र विवाह की प्रथा और संपत्ति अधिकारों में वास्तविक विकृतियों द्वारा भली-भांति बनी हुई है।

तब क्या यह आश्चर्य की बात है कि विश्व बैंक के नर-नारी विकास संबंधी सूचकांक में 155 देशों में भारत का स्थान 114वां है ?

III

देवियो और सज्जनो,

इस असमानता को समझने के लिए, हमें समझना चाहिए कि लैंगिकता महिलाओं का पर्याय नहीं है। यह महिलाओं और पुरूषों दोनों को और उनके बीच मौजूद संबंध को इंगित करता है। महिला पुरूष संबंधी भूमिकाएं नियत नहीं होती हैं, इन्हें समाजीकरण के भाग के रूप में सीखा जाता है, ये संस्कृति और परंपराओं द्वारा प्रभावित होती हैं और इन्हें शिक्षा, सामाजिक-राजनीतिक और विधायी हस्तक्षेपों के माध्यम से बदला जा सकता है।

महिला-पुरूष समानता को परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है "व्यक्ति विशेष के अधिकार, उत्तरदायित्व और अवसर इस बात पर निर्भर नहीं करेंगे कि उसका जन्म पुरूष के रूप में हुआ है अथवा महिला के रूप में

और महिलाओं और पुरूषों के विचारों, हितों, आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं की योजना बनाने और निर्णय लेने में समान महत्व दिया जाएगा"।

पूर्ववर्ती बात से एक सवाल खड़ा हो जाता है। महिला-पुरूष समानता को हमारे संविधान की एक मूलभूत विशेषता के रूप में और मानवाधिकारों तथा स्त्री अधिकारों के, जिनका भारत पूरी तरह से समर्थन करता है, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानदंडों के एक आवश्यक परिणाम के रूप में किस प्रकार संवर्धित व सुनिश्चित किया जायेगा?

महिला सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 में तीन नीतिगत बातों पर जोर दिया गया हैः

1. न्यायिक/विधिक सशक्तीकरण - विधिक व्यवस्था को महिलाओं की आवश्यकताओं के प्रति अधिक उत्तरदायी तथा लिंगगत रूप से संवेदनशील बनाकर ।

2. आर्थिक सशक्तीकरण - विकास प्रक्रिया में लिंगगत परिप्रेक्ष्यों का समावेश करके, महिलाओं की क्षमताओं का संवर्द्धन करके तथा आर्थिक अवसर सुलभ कराकर।

3. सामाजिक सशक्तीकरण - शिक्षा, स्वास्थ्य तथा पोषाहार पर संकेन्द्रित प्रयासों के द्वारा।

संक्रियात्मक कार्यनीतियों की दृष्टि से, राष्ट्रीय नीति में नर-नारी विकास संबंधी सूचकांक, लिंगगत भिन्न-भिन्न आंकड़ों, महिलान्मुखी बजटीय व्यवस्था, पंचवर्षीय योजनाओं में महिला संघटक योजना जिससे कम से कम 30% हितलाभ/निधियां महिलाओं को मिल सके, और महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता का आह्वान किया गया है।

सभ्य समाज और महिला संगठनों के साथ भागीदारी को निर्मित व सुदृढ़ करने के लिए वचनबद्धता प्रकट करने वाली यह नीति ऐसे पारम्परिक पूर्वाग्रहों तथा प्रथाओं, जो महिलाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं, के उन्मूलन की प्रविधि के बारे में मौन है।

इन महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर सार्थक कार्रवाई, स्पष्टतः, सभ्य समाज के क्षेत्र में ही निहित है। अनुभव से पता चलता है कि महिलायें शक्ति अर्जित करके तथा अपने-अपने जीवन पर नियंत्रण कर स्वयं का सशक्तीकरण करती हैं। सरकारें तथा समाज जागरूकता पैदा करके, महिलाओं के लिए उपलब्ध विकल्पों का विस्तार कर, संसाधनों पर महिलाओं की पहुंच तथा नियंत्रण में वृद्धि करके और महिलाओं के प्रति भेदभाव तथा असमानता का उन्मूलन करने वाले लक्षित प्रयासों के द्वारा इन प्रक्रियाओं को सुगम बना सकते हैं।

महिला सशक्तीकरण को पुरुषों को नुकसान पहुंचाने वाले उपाय के तौर पर देखना भी एक गंभीर भ्रांति होगी। पुरुषों की सक्रिय सहभागिता के बिना महिलाओं का सशक्तीकरण नहीं किया जा सकता।

सांकेतिक प्रयास करने की परिपाटी से परे जाने का समय आ गया है। लोगों के मन में लैंगिक समता को उचित ठहराना एक जटिल प्रक्रिया है और महिला सशक्तीकरण स्वतः मात्र हल का एक हिस्सा है। *भारत सामाजिक विकास प्रतिवेदन 2006* में कहा गया है कि "लैंगिक आधार पर खंडित सामाजिक विकास को सम्पूर्ण समाज के लिए एक सरोकार बनाना होगा", इस प्रतिवेदन में आगे यह कहा गया है कि "यह अत्यंत आवश्यक है कि महिला सशक्तीकरण की प्रक्रिया अधिक व्यापक संरचनात्मक, सामाजिक तथा राजनीतिक संरचनाओं में स्थित हो" जिसे संस्थागत नियमों में पुरुषों को सामाजिक परिवर्तनों की योजना करने की अधिक बड़ी भूमिका दे कर किया जाए।

तो चुनौती प्रत्यक्ष से परे नयी जागरूकता और व्यापक क्षेत्रों का सृजन करने की आवश्यकता की है।

शुरुआत घर से ही करनी होगी। घरेलू व्यवस्थाएं महिला-पुरूष संबंधों की संस्था की केन्द्र-बिन्दु हैं। कुछ वर्ष पहले, किसी आधिकारिक दस्तावेज में यह स्वीकार किया गया था कि भारत में परिवार में "लोकतांत्रिक मूल्यों को पुष्पित-पल्लवित करने वाला स्थान नहीं रहा है। लोकतांत्रिक पारिवारिक संरचना की आवश्यकता न सिर्फ महिलाओं के लिए अपितु परिवारों के लिए भी एक प्रमुख चुनौती है।"

हमें उन तनावों को निर्भीकतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए जो एक लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था तथा वैविध्यपूर्ण सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में नागरिकता के वैश्वीकरण और व्यस्क मताधिकार से उत्पन्न होते हैं। परिणामस्वरूप, किसी भी नागरिक की कई शख्सियितें होती हैं और वह इसे अपरिहार्य रूप से उन शक्ति-संरचनाओं में प्रदर्शित करता है जिनमें वह भागीदार होता है।

इस प्रकार इससे उत्पन्न दुविधा को दूर करने की जिम्मेदारी मुख्य व्यक्ति और समूह की होती है, न कि राज्य की। राज्य अधिक से अधिक औपचारिक संरचनाओं का निर्माण कर सकता है और उस शैक्षिक प्रणाली के माध्यम से प्रोत्साहन का उपाय अपना सकता है जिसे अवश्य ही पूर्णतः और व्यापक रूप से इस प्रयोजन के लिए तैयार होना चाहिए।

IV

मित्रो,

हमारा समाज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। स्वयं मूल्य प्रणाली ही परिवर्तित हो रही है। कोई भी सुकर उपाय ज्ञात नहीं है। यह स्वाभाविक है कि जैसे-जैसे हम लैंगिक महिला-पुरूष समानता को यथार्थ का रूप देने का प्रयास करेंगे वैसे-वैसे गलतियां होंगी। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था,"स्वतंत्रता को तब ही स्वतंत्रता कहा जा सकता है जब किसी को इसका दुरूपयोग करने का अधिकार प्राप्त हो।"

नागरिक का एकमात्र सहारा संविधान है और जिसे अम्बेडकर ने "संवैधानिक नैतिकता" कहा था। दोनों के लिए कथनी और करनी के स्तर पर अटूट प्रतिबद्धता की आवश्यकता है।

महिला-पुरूष समानता के मुद्दे पर राज्य की जिम्मेदारी में कोई संदेह नहीं है और राज्य लैंगिक इस समानता को हासिल करने के लिए प्रतिबद्ध है। अन्य हितार्थियों की भूमिका भी व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से उतनी ही महत्वपूर्ण है। इस श्रोता-समूह में मौजूद आप में से बहुत लोग जब विश्वविद्यालय के सुरक्षित परिवेश से परे जिन्दगी का सामना करेंगे तो आपको लैंगिक भेदभाव का अनुभव होगा उस मोड़ पर, आप से अपने दृढ़ मत के आधार पर कार्य करने की अपेक्षा की जाएगी। तब एक बेहतर, और अधिक सर्वसमावेशी समाज के कल्याण के लिए लोक नीति सक्रियतावाद को इन सामाजिक बुराइयों का सामना करना होगा।

सामाजिक सुधार एक क्रमिक प्रक्रिया है जिसमें लगातार आगे बढ़ते रहना होगा। महिला-पुरूष समानता के मुद्दे पर बहुत राष्ट्रीय बहस में काफी प्रगति हो चुकी है और इसने बहुत गति पकड़ ली है। इसका ध्यान सार्थक समानता और विकल्प बढ़ाने पर केन्द्रित होना चाहिए।

देवियो और सज्ञनो,

मैं उत्तीर्ण हो रहे छात्रों, पुरस्कार विजेताओं तथा उच्च श्रेणी प्राप्तकर्ताओं को बधाई देते हुए अपनी बात समाप्त करना चाहूंगा। मैं उनके

व्यवसायिक प्रयासों तथा व्यक्तिगत जीवन में सफलता की कामना करता हूं। मेरा उनसे आग्रह है कि वह विश्वास रखें कि उनके व्यक्तिगत प्रयास से, चाहे वह कितना भी साधारण क्यों न हो, एक बेहतर भविष्य का सृजन किया जा सकता है।

मैं एक बार पुनः कुलाधिपति शंकरनारायणन जी और कुलपति प्रो. चन्द्रा कृष्णमूर्ति को धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने मुझे इस दीक्षांत समारोह में आमंत्रित किया।